International Journal of Advanced Education and Research
ISSN: 2455-5746, Impact Factor: RJIF 5.34
www.alleducationjournal.com
Volume 2; Issue 2; March 2017; Page No. 26-27

डॉ0 अम्बेडकर विचार–दर्शन

आशा रानी

असिस्टैंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, वैश्य पी0जी0 कॉलेज, भिवानी, हरियाणा, भारत।

प्रस्तावना

सदियों से दलित समाज धनाढ्य वर्ग द्वारा शोषित किया जाता रहा है। आजादी के बाद डॉ. अम्बेडकर ने दलितों में नवचेतना व जागृति पैदा की। दलित कविताओं में, समता, बन्धुता, स्वाधीनता, मुक्ति संघर्ष, आदि का जिक्र बार–बार आता है। वास्तव में छुआछूत की एक गम्भीर समस्या थी जिससे निजात पाने में डॉ. अम्बेडकर का योगदान उल्लेखनीय है। नामदेव ढसाल की कविता – 'अब–अब' में इस विचार की सशक्त अभिव्यक्ति स्पष्ट दीख पड़ती है :–

सूरज की पीठ किये, वे शताब्दियों तक यात्रा करते रहे।
अब–अब, अन्धियारे की ओर यह यात्रा हमें बन्द करनी चाहिये।
और यह कि इस अंधेरे को ढोते-ढोते हमारे पिता अब झुक गये हैं।
अब–अब, हमें उस बोझ को उनकी पीठ से हटाना होगा।
इस वैभवशाली शहर को बनाने में हमारा खून बहा है।
इसके बदले में हमें केवल पत्थर खाने को मिले हैं।
'अब–अब' इस गगनचुम्बी इमारत को उठाना होगा।
हजारों सालों बाद हमें एक सूरजमुखी फूल देने वाला।
फकीर मिला है
अब–अब, सूरजमुखी के फूल की तरह हमें अपना चेहरा
सूरज की ओर कर लेना चाहिये।[1]

दलित सदियों तक शोषित रहे हैं, दमित रहे हैं, अन्याय–अत्याचार को सहन किया है। भारत की सभ्यता के निर्माता रहे हैं और अब समय की पुकार दलितों को पुराने इस अंधकार से बाहर निकाला जाये। उनके कल्याण के लिए प्रभावकारी योजनाएं बनाई जायें। डॉ. अम्बेडकर दलित आन्दोलन के महान् योद्धा थे। उत्कृष्ट प्रतिभा के धनी थे। शोषित वर्ग को न्याय दिलवाने के लिए हमेशा जी–जान से जुटे रहते थे। हिन्दी कवि कंवल भारती डॉ. अम्बेडकर के आन्दोलन के प्रति अपनी प्रतिबद्धता जाहिर करते हुए अपने विचार प्रकट करते हैं :–

> ''जो मुक्ति संग्राम लड़ा था तुमने जारी रहेगा उस समय तक जब तक कि हमारे मुर्झाये पौधों के हिस्से का सूरज उग नहीं आता''[2]

डॉ. साहब ने दलितों की सोई हुई आत्मा को जगाया। उनमें नवचेतना का संचार किया। शिक्षा के लिए, विकास के लिए प्रेरित किया। उनके अधिकारों के लिए लड़ने का संकल्प लेकर उनको प्रोत्साहित किया। आजीवन दलितों के जीवन को उत्कृष्ट बनाने के लिए सतत् संघर्ष करते रहे। दलितों के कल्याण के लिए विषमता और जुल्मों पर आधारित धर्म को त्याग कर बौद्ध धर्म अपना कर नरकतुल्य जीवन से छुटकारा पाया। साहित्यकारों को संबोधित करते हुए वे कहते हैं :

> ''उदात्त जीवन मूल्यों एवं सांस्कृतिक मूल्यों को अपने साहित्य में स्थान देना चाहिए। साहित्यकार का उद्देश्य संकुचित न होकर विस्तृत एवं व्यापक हो। वे कलम अपने तक सीमित न रखें, बल्कि उनका प्रयत्न प्रखर देहाती जीवन के अज्ञान का अंधकार दूर करने में हो। दलितों, उपेक्षितों का बड़ा वर्ग देश में है। इस बात को सदा याद रखें। उनका सुख–दुःख एवं उनकी समस्यायें समझ लेने की कोशिश करें। साहित्य के द्वारा उनका जीवन उन्नत करने के लिए प्रयत्नरत रहें। यही सच्ची मानवता है।''[3]

प्रत्येक सरकार दलितों को वोट बैंक बनाने का यत्न करती है, लेकिन उनकी मूलभूत समस्याओं एवं संवेदनाओं का ध्यान नहीं करती है। यही कारण है कि 70 साल के उपरान्त भी दलितों की समस्याओं का समाधान न हो सका। इसका एकमात्र कारण है कि नेताओं की नीयत और नीति में खोट है। वे सच्चे मन से इनकी समस्याओं का समाधान करना नहीं चाहते हैं।

हिन्दी दलित कवि अपने विचारों को अभिव्यक्त करता है :

> ''मैं उस अतीत को बहुत करीब पाता हूँ
> जिसे जिया था तुमने अपने संघर्ष में तुम्हारे विचारों में मुखर होता है एक रचनात्मक विप्लव जो समाता है
> मेरे रोम–रोम में बाबा तुम मरे नहीं हो जीवित हो हमारी चेतना में जो मुक्ति संग्राम लड़ा था तुमने वह जारी रहेगा उस समय तक जब तक हमारे मुर्झाये पौधों के हिस्से का सूरज उग नहीं जाता है।''[4]

जब तक भारत देश को जातिप्रथा से मुक्त नहीं कर दिया जाता है तब तक किसी भी समस्या का समाधान नहीं हो सकता। आज समय की आवश्यकता है सभी दलों के नेता देश के कल्याण के लिए एकत्र हो कर इस समस्या का समाधान खोजें। तभी देश उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो सकेगा।

'ठाकुर का कुँआ' में ओमप्रकाश वाल्मीकि ने यह सवाल उठा कर सवर्ण चेतना को झकझोर दिया :

> ''चूल्हा मिट्टी का, मिट्टी तालाब की तालाब ठाकुर का भूख रोटी की रोटी बाजरे की बाजरा खेत का खेत ठाकुर का बैल ठाकुर का हल ठाकुर का हल की मूठ पर हथेली अपनी फसल ठाकुर की कुंआ ठाकुर का पानी ठाकुर का खेत–खलिहान ठाकुर के फिर अपना क्या ?
> गांव? शहर? देश?''[5]

डॉ. अम्बेडकर का मार्ग अहिंसा का मार्ग है क्योंकि डॉ. साहब बौद्ध धर्म के अनुयायी थे। बौद्ध धर्म में हिंसा का कोई स्थान नहीं है। इस प्रकार से उन्होंने अपने अनुयायियों को हिंसा त्याग कर अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने का संदेश दिया। दलितों में अपनी खोई हुई अस्मिता को पहचानने और उसे पुनः प्राप्त करने की जद्दोजहद शुरू हुई। इसको प्राप्त करने लिए परिश्रम एवं शिक्षा की आवश्यकता है। शिक्षा के अभाव में कोई कार्य सम्पन्न नहीं होता है। जयप्रकाश कर्दम अपने विचारों को अभिव्यक्त करते हैं :–

''मेरे ऊपर होने लगे जुल्म और ज्यादतियों का जोर गवाह है इतिहास देता रहा है, हमेशा से अहिंसा को हिंसा का अहसास लेकिन फड़कने लगी हैं मेरी भुजाएँ और कुलबुलाने लगे हैं, फावड़ा, कुल्हाड़ी और हथौड़ा पकड़े मेरे हाथ, काट फैंकने को उन हाथों को जिन्होंने बरसाये हैं अनगिनत कोड़े मेरी पीठ पर''[6]

दलित विमर्श में जाति एक मुख्य मुद्दा है। जाति एक ऐसा अभिशाप है जो कि समाज को निगल रहा है। समाज ही नहीं देश की उन्नति में बाधक है। यदि 'मनुर्भव' इस सिद्धान्त को अपना लें तो सभी समस्याओं का समाधान हो जाता है। सच्चा मनुष्य ही देश के निर्माण में व दलित आदि समस्या का निदान कर सकता है। सवर्ण कवि दलितों की रचनाओं को विश्वसनीय नहीं मानते हैं। उन्हें दलित रचनाएँ शिल्पहीन एवं कलाहीन लगती हैं। विद्वान् प्रभाकर माण्डे इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा है : 'दलित साहित्य का विकास केवल एक ऐतिहासिक घटना नहीं है। इसलिए इसे केवल साहित्यिक परिप्रेक्ष्य में नहीं देखा जाना चाहिए। जब तक साहित्यिक शृंखला को सामाजिक दृष्टिकोण से समाज घटित हो रहे बदलावों की पूरी पृष्ठभूमि के मद्देनजर नहीं देखा जायेगा, इसके महत्त्व को नहीं समझा जा सकता है।''[7]

दलित समाज समाज–व्यवस्था के सभी छलकपट जान चुका है। अब वह किसी पर भी विश्वास करने की मुद्रा में नहीं है। वह अब क्रान्तिकारी रूप में अपने आपको प्रदर्शित कर रहा है। उसमें विरोध के उच्च स्वर मुखरित हो रहे हैं। प्रतिशोध लेने के लिए तैयार है। देवेश चौधरी कहते हैं :

''मेरे पुरखों! मुझे क्षमा करना मैंने तुम्हारी रस्में तोड़ी हैं
मैंने झुका कर पाँय लागू अपनाने की परम्परा नकारी है।
रूखा–सूखा जूठन खाने की बजाय मैंने धरती का सीना फाड़ अन्न उगाया है।
मैंने जमींदार के खेत में मजदूरी करने की बजाए जो जोते जमीन उसी की माँग की है।
मैंने बहुत कोशिश की मानव को मानव समझा जाय उसे भेड़ बकरियों की तरह न हकाला जाय पर अफसोस! सारे प्रयत्न निरर्थक रहे मैं रहा जन का जन वे बने रहे हरि मुझे नहीं दिला पाये मुक्ति उनके अन्यायों से।''[8]

उपसंहार

दलित कविता कवियों की अन्तःकरण की वेदना है जो कि कविता माध्यम से दलित समाज के लिए हुंकार है, चेतना है, नवजागृति है, उत्साह एवं संघर्ष की ज्वाला है। दलित कविता में डॉ. अम्बेडकर की वाणी का ओज है, वेदना है, संघर्ष है तथा वास्तव में विचार किया जाये तो जीवन दृष्टि है। समूचे दलित समाज को मुक्ति दिलाने की आकांक्षा है। यही दलित वेदना है जो एक दलित कवि को दूसरों से अलग करती है।

सन्दर्भ सूची

1. नामदेव ढसाल – अब–अब, एन एंकोलॉजी आफ दलित लिटरेचर, सम्पादक, मुल्कराज आनन्द, एलिनर जिलट, ज्ञान पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 1992, पृ. 53
2. कंवल भारती, मुक्ति संग्राम जारी है, तब तुम्हारी निष्ठा क्या होगी, पृ.33
3. डॉ. अम्बेडकर का भाषण, विदर्भ साहित्य संघ, नागपुर।
4. कंवल भारती, मुक्ति संग्राम जारी है, तब तुम्हारी निष्ठा क्या होगी, पृ.33
5. ओमप्रकाश वाल्मीकि, सदियों का सन्ताप, फिलहाल प्रकाशन 1989, पृ.3
6. दलित साहित्य वार्षिकी 2001, सम्पादक जयप्रकाश कर्दम, पृ. 15
7. वही
8. देवेश कुमार चौधरी 'देव', भारतीय दलित साहित्य परिप्रेक्ष्य, सम्पादक फुन्नी सिंह, कमल प्रसाद, राजेन्द्र